लोकतांत्रिक सुदृढ़ीकरण में न्यायिक सक्रियता की भूमिका

डॉ पूजा शुक्ला

असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग

आचार्य नरेंद्रदेव नगर निगम महिला महाविद्यालय हर्षनगर कानपुर

किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र के लिए चुनाव एकमात्र आधार होता है,जिस पर वह लोकतांत्रिक व्यवस्था टिकी होती है। भारत भी एक लोकतांत्रिक गणराज्य है,जिसमें चुनाव एक महत्वपूर्ण आधार है। भारतीय जनता अशिक्षा व गरीबी के कारण बिना किसी जानकारी के अपना वोट डालती हैं,जबकि उम्मीदवारों द्वारा उन्हें समुचित जानकारी उपलब्ध नहीं कराई जाती। इन्हीं सब समस्याओं व चुनावी पारदर्शिता को बनाए रखने के लिए न्यायिक सक्रियता जो कि न्यायपालिका की एक अग्रणी भूमिका है, के माध्यम से PUCL ,ADR व अन्य संस्थाओं ने जनहित के वाद न्यायालय के समक्ष लाकर समय-समय पर चुनावी पारदर्शिता को बनाए रखना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रस्तुत शोध पत्र में जनहित याचिका के माध्यम से चुनाव के क्षेत्र में व्याप्त समस्याओं व भ्रष्टाचार के मामलों पर न्यायपालिका द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण निर्णयों का अध्ययन किया जा रहा है-Union of India v. Association for Democratic Reforms (2002), People's Union for Civil Liberties v. Union of India (2003), Lily Thomas v. Union of India (2013),Subramanian Swamy v. Election Commission of India (2013), NOTA case (PUCL v. Union of India, 2013), Public Interest Foundation v. Union of India (2018), इन वादों का प्रमुख आधार जनहित याचिका (Public Interest Litigation) रहा, जिसने आम नागरिकों और संगठनों को लोकतांत्रिक सुधार के लिए सीधे न्यायालय तक पहुँचने का अधिकार दिया।

Key Words: न्यायिक सक्रियता, लोकतंत्र, PIL, चुनव सुधार, NOTA

लोकतांत्रिक सुदृढ़ीकरण में न्यायिक सक्रियता की भूमिका

किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र के लिए चुनाव एकमात्र आधार होता है,जिस पर वह लोकतांत्रिक व्यवस्था टिकी होती है। भारत भी एक लोकतांत्रिक गणराज्य है,जिसमें चुनाव एक महत्वपूर्ण आधार है। निष्पक्ष व पारदर्शी चुनाव के बिना एक मजबूत लोकतंत्र का विकास संभव नहीं है, भारत एक मध्यम साक्षरता वाला, आर्थिक रूप से कमजोर, विविध संस्कृतियों व सभ्यताओं से सुसज्जित राष्ट्र है, जहां लोगों की साक्षरता कम होने के कारण वह राजनीतिक मुद्दों में अपनी भागीदारी उतने उत्कृष्ट ढंग से नहीं कर पाते, जितना कि विकसित देशों में देखने को मिलता है, गरीबी व अशिक्षा के कारण आम जनता को वास्तविक मुद्दों से दूर रख पाना उम्मीदवारों के लिए आसान हो जाता है। जनता उम्मीदवारों को उनकी पृष्ठभूमि जाने बिना लोक लुभावन आश्वासनों पर विश्वास करके किसी को भी अपना वोट दे देती है, जिसके परिणामस्वरुप यहां पर कई बार उम्मीदवारों की आपराधिक पृष्ठभूमि,चुनाव में धांधली व अपारदर्शिता देखने को मिलती है,जो कि लोकतांत्रिक आधारशिला को कमजोर बनाती है। सभी राजनीतिक दल जनता के प्रति जवाबदेही पारदर्शी व जिम्मेदार तरीके से चुनाव में प्रतिभाग करें, चुने जाने पर निष्पक्ष रूप से जनता के हित में शासन की नीतियों का निर्माण कर सकें,इसके लिए आवश्यक है, कि चुनाव आयोग व सर्वोच्च न्यायालय यह सुनिश्चित करें, कि चुनावी प्रक्रिया भारतीय जनता के लिए सुगम पारदर्शी व अपराध मुक्त हो। सभी मतदाताओं को अपने उम्मीदवारों की आपराधिक पृष्ठभूमि आय व संपत्ति की समुचित जानकारी हो, इन्ही मुद्दों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विभिन्न संस्थाओं व लोगों के द्वारा न्यायिक सक्रियता के माध्यम से जनहित याचिका के द्वारा वाद लाए जा रहे हैं,व न्यायपालिका

द्वारा त्वरित गति से उन पर निर्णय भी दिये जा रहे हैं। भारत में चुनाव सुधार के क्षेत्र में जनहित वाद (PIL) के माध्यम से कई प्रमुख व्यक्तियों और संगठनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनमें सबसे प्रमुख नाम अनिल कुमार नेहरू और विशेष रूप से त्रिलोचन शास्त्री जैसे व्यक्तियों का है, जो एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) से जुड़े रहे हैं। इस संगठन ने 1999 में एक ऐतिहासिक जनहित याचिका दायर की, जिसके परिणामस्वरूप उम्मीदवारों के आपराधिक रिकॉर्ड, शैक्षिक योग्यता और संपत्ति के विवरण को सार्वजनिक करना अनिवार्य किया गया।

इसके अतिरिक्त पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (PUCL) ने भी महत्वपूर्ण PIL दायर की, जिसके तहत मतदाताओं को "नोटा" (NOTA – None of the Above) का विकल्प प्रदान किया गया।

इसी प्रकार कॉमन कॉज और लोक प्रहरी जैसे संगठनों ने भी चुनावी पारदर्शिता, उम्मीदवारों की जवाबदेही और भ्रष्टाचार के खिलाफ अनेक जनहित याचिकाएँ दायर कीं।न्यायिक सक्रियता न्यायपालिका की एक अग्रणी भूमिका है,जिसकी शुरुआत भारत में 1980 के दशक में हुई,जिसके अंतर्गत न्यायालय संविधान की भावना की रक्षा करते हुए विधायिका और कार्यपालिका—की अकर्मण्यता व त्रुटियों को संतुलित करने हेतु सक्रिय भूमिका निभाते हैं।जिसके तहत सर्वोच्च न्यायालय ने लोकस स्टैंडाई (locus standi) में उदारता का समावेश करते हुए यह व्यवस्था दी कि पीड़ित व वंचित वर्ग की ओर से कोई भी संगठन या व्यक्ति जनहित वाद(PIL) लेकर न्यायालय के समक्ष आ सकता है"

इस विकास में न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती और वी.आर. कृष्ण अय्यर की महत्वपूर्ण भूमिका रही, जिन्होंने पत्रों और समाचार रिपोर्टों को भी याचिका के रूप में स्वीकार कर न्याय तक पहुंच को सरल बनाया।PIL की अवधारणा न्यायिक सक्रियता से घनिष्ठता से जुड़ी हुई है,जिसके द्वारा एक पोस्टकार्ड के माध्यम से न्यायालय के समक्ष वाद लाया जा सकता है, जिससे न्याय क्षेत्र में व्याप्त जटिलताओं का सरलीकरण करते हुए पर्यावरण संरक्षण, लैंगिक हिंसा, असमानता, कैदियों के अधिकार, व अन्य विभिन्न आवश्यक जनहित के मुद्दों को न्यायालय के समक्ष PIL के माध्यम से ही लाया गया। प्रारंभिक मामलों में बंधुआ मजदूरी, कारागार सुधार, और बाल श्रम जैसे मुद्दों को उठाया गया। हुसैनआरा खातून बनाम बिहार राज्य व मुंबई कामगार सभा जैसे वाद इसकी नींव कहे जा सकते हैं।1980 और 1990 के दशकों में PIL का विस्तार पर्यावरण संरक्षण (जैसे गंगा प्रदूषण), महिला अधिकार, और पारदर्शिता चुनाव सुधार नीति निर्माण जैसे क्षेत्रों तक हुआ। वर्तमान समय में जनहित याचिका के माध्यम से चुनाव के क्षेत्र में व्याप्त समस्याओं व भ्रष्टाचार के मामलों पर न्यायपालिका ने महत्वपूर्ण निर्णय दिए हैं-Union of India v. Association for Democratic Reforms (2002), People's Union for Civil Liberties v. Union of India (2003), Lily Thomas v. Union of India (2013),Subramanian Swamy v. Election Commission of India (2013), NOTA case (PUCL v. Union of India, 2013), Public Interest Foundation v. Union of India (2018), इन वादों का प्रमुख आधार जनहित याचिका (Public Interest Litigation) रहा, जिसने आम नागरिकों और संगठनों को लोकतांत्रिक सुधार के लिए सीधे न्यायालय तक पहुँचने का अधिकार दिया। इन प्रमुख वादों का विस्तृत उल्लेख इस प्रकार है –

Union of India v. Association for Democratic Reforms (2002)

इस वाद की शुरुआत Association for Democratic Reforms द्वारा दायर जनहित याचिका से हुई, जिसमें यह मांग की गई थी, कि चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की आपराधिक पृष्ठभूमि, शैक्षणिक योग्यता और संपत्ति/दायित्वों की जानकारी मतदाताओं को उपलब्ध कराई जाए। याचिकाकर्ताओं का तर्क था कि जब तक मतदाता उम्मीदवारों

के बारे में पूरी जानकारी नहीं जानेंगे, तब तक वे स्वतंत्र और सूचित निर्णय नहीं ले सकते, जिससे लोकतंत्र की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

मामला पहले दिल्ली हाई कोर्ट में गया, जहाँ न्यायालय ने उम्मीदवारों के लिए शपथपत्र के माध्यम से उपर्युक्त जानकारी देना अनिवार्य कर दिया। इसके खिलाफ केंद्र सरकार सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया पहुँची और तर्क दिया, कि इस प्रकार के निर्देश देना न्यायपालिका का कार्यक्षेत्र नहीं है, बल्कि यह विधायिका और भारत निर्वाचन आयोग का विषय है। सुप्रीम कोर्ट ने सरकार के इस तर्क को अस्वीकार करते हुए कहा कि मतदाताओं का "जानने का अधिकार" अनुच्छेद 19(1)(a) के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अभिन्न हिस्सा है। न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि लोकतंत्र में सही प्रतिनिधि चुनने के लिए मतदाताओं को उम्मीदवारों के बारे में आवश्यक जानकारी मिलना अनिवार्य है। इसलिए अदालत ने निर्देश दिया कि सभी उम्मीदवारों को नामांकन पत्र के साथ एक शपथपत्र देना होगा, जिसमें उनकी आपराधिक पृष्ठभूमि (लंबित और सिद्ध अपराध), संपत्ति और देनदारियाँ, तथा शैक्षणिक योग्यता का विवरण होगा।

इस निर्णय का प्रभाव व्यापक रहा। इसके बाद चुनाव प्रक्रिया में पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ी तथा मतदाताओं को अधिक सशक्त बनाया गया।

People's Union for Civil Liberties v. Union of India (2003)

इस वाद की पृष्ठभूमि Union of India v. Association for Democratic Reforms (2002) के फैसले से जुड़ी है, जिसमें उम्मीदवारों की जानकारी सार्वजनिक करना अनिवार्य किया गया था। इसके बाद केंद्र सरकार ने जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में संशोधन करके धारा 33B जोड़ी, जिसके तहत उम्मीदवारों को केवल सीमित जानकारी देने की बाध्यता थी और व्यापक खुलासे से छूट देने का प्रयास किया गया।

इस संशोधन को People's Union for Civil Liberties (PUCL) ने चुनौती दी और तर्क दिया कि यह मतदाताओं के मौलिक अधिकारों का हनन है। याचिकाकर्ताओं का कहना था कि मतदाता को उम्मीदवार के आपराधिक मामलों, संपत्ति, देनदारियों और शैक्षणिक योग्यता की पूरी जानकारी मिलनी चाहिए, ताकि वह एक सूचित निर्णय ले सके।

सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले में सरकार के संशोधन को असंवैधानिक घोषित कर दिया और कहा कि "जानने का अधिकार" अनुच्छेद 19(1)(a) के तहत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का हिस्सा है। न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि लोकतंत्र केवल मतदान का अधिकार नहीं है, बल्कि सूचित मतदान (informed voting) का अधिकार भी है। इसलिए उम्मीदवारों को अपनी आपराधिक पृष्ठभूमि (लंबित व सिद्ध मामले), संपत्ति और शैक्षणिक योग्यता का पूरा विवरण देना अनिवार्य होगा।इस निर्णय का दूरगामी प्रभाव पड़ा। इससे सरकार द्वारा चुनावी पारदर्शिता को सीमित करने का प्रयास विफल हुआ और भारत निर्वाचन आयोग को निर्देश मिला कि वह उम्मीदवारों से शपथपत्र के माध्यम से पूरी जानकारी सुनिश्चित करे। इस वाद ने भारतीय लोकतंत्र में पारदर्शिता, जवाबदेही और मतदाता सशक्तिकरण को नई दिशा दी।

Lily Thomas v. Union of India (2013)

यह मामला भारतीय राजनीति के अपराधीकरण पर निर्णायक प्रहार करने वाला एक ऐतिहासिक निर्णय है, जिसमें सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया ने न्यायिक सक्रियता का परिचय देते हुए जनप्रतिनिधियों की अयोग्यता से संबंधित कानून की संवैधानिकता की समीक्षा की। इस वाद की पृष्ठभूमि जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8(4)

से जुड़ी थी, जिसके अनुसार यदि कोई सांसद या विधायक किसी आपराधिक मामले में दोषी ठहराया जाता था, तो उसे अपील करने के लिए 3 महीने का समय मिलता था और इस अवधि में वह अपनी सदस्यता बनाए रख सकता था। याचिकाकर्ता Lily Thomas सहित अन्य ने इस प्रावधान को चुनौती देते हुए तर्क दिया, कि यह सामान्य नागरिकों और जनप्रतिनिधियों के बीच असमानता पैदा करता है तथा संविधान के समानता के सिद्धांत के विरुद्ध है। उनका कहना था, कि यदि कोई व्यक्ति दोषी सिद्ध हो जाता है, तो उसे तुरंत अयोग्य घोषित किया जाना चाहिए, अन्यथा इससे राजनीति में अपराधियों को संरक्षण मिलता है।

सुप्रीम कोर्ट ने इस तर्क को स्वीकार करते हुए धारा 8(4) को असंवैधानिक घोषित कर दिया। न्यायालय ने कहा कि संविधान के तहत संसद या राज्य विधानमंडल का सदस्य बनने की योग्यता और अयोग्यता का निर्धारण स्पष्ट रूप से किया गया है, और दोषसिद्धि के बाद व्यक्ति स्वतः अयोग्य हो जाता है। अदालत ने यह भी स्पष्ट किया कि विधायिका किसी विशेष वर्ग (जैसे सांसद/विधायक) को इस प्रकार की अतिरिक्त छूट नहीं दे सकती।

इस निर्णय के परिणामस्वरूप अब यदि कोई सांसद या विधायक किसी आपराधिक मामले में दोषी ठहराया जाता है और उसे कम से कम 2 वर्ष की सजा होती है, तो उसकी सदस्यता तत्काल समाप्त हो जाती है, भले ही उसने उच्च न्यायालय में अपील दायर कर दी हो। इस फैसले ने भारतीय राजनीति में जवाबदेही और नैतिकता को बढ़ावा दिया तथा अपराधीकरण पर अंकुश लगाने की दिशा में एक मजबूत कदम साबित हुआ।

Subramanian Swamy v. Election Commission of India (2013)

यह मामला भारतीय चुनाव प्रणाली की पारदर्शिता और विश्वसनीयता से संबंधित एक अत्यंत महत्वपूर्ण निर्णय है, जिसमें सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया ने इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) के साथ अतिरिक्त सत्यापन तंत्र लागू करने की आवश्यकता को स्वीकार किया। इस वाद में याचिकाकर्ता Subramanian Swamy ने यह तर्क दिया कि केवल EVM के माध्यम से मतदान की प्रक्रिया पूरी तरह पारदर्शी नहीं मानी जा सकती, क्योंकि मतदाता के पास यह सत्यापित करने का कोई स्वतंत्र साधन नहीं होता कि उसका वोट वास्तव में उसी उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज हुआ है जिसे उसने चुना है।

याचिकाकर्ता ने यह भी कहा कि लोकतंत्र की मूल आत्मा स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव है, और इसके लिए आवश्यक है कि मतदाता को अपने वोट की पुष्टि (verification) करने का अधिकार मिले। इस संदर्भ में भारत निर्वाचन आयोग ने भी तकनीकी सुधारों की संभावना स्वीकार की, लेकिन इसे व्यापक रूप से लागू करने में व्यावहारिक कठिनाइयों का हवाला दिया।सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में यह माना कि चुनाव प्रक्रिया की विश्वसनीयता लोकतंत्र की आधारशिला है, और यदि मतदाता को अपने वोट पर विश्वास नहीं होगा, तो पूरी प्रणाली पर प्रश्नचिह्न लग सकता है। इसलिए न्यायालय ने निर्देश दिया कि EVM के साथ VVPAT (Voter Verifiable Paper Audit Trail) प्रणाली को जोड़ा जाए। इस तकनीक के तहत जब मतदाता वोट डालता है, तो एक कागजी पर्ची (paper slip) कुछ सेकंड के लिए प्रदर्शित होती है, जिससे वह यह सुनिश्चित कर सकता है कि उसका वोट सही उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज हुआ है।न्यायालय ने यह भी कहा कि VVPAT प्रणाली "मुफ्त और निष्पक्ष चुनाव" (free and fair elections) की संवैधानिक आवश्यकता को मजबूत करती है और यह मतदाताओं के विश्वास को बढ़ाने के लिए आवश्यक है। इसके बाद भारत निर्वाचन आयोग ने चरणबद्ध तरीके से पूरे देश में VVPAT लागू किया, जो आज भारतीय चुनाव प्रणाली का अभिन्न हिस्सा बन चुका है।

NOTA case (PUCL v. Union of India, 2013)

यह मामला भारतीय लोकतंत्र में मतदाताओं के "राइट टू रिजेक्ट" को मान्यता देने वाला एक महत्वपूर्ण निर्णय है, जिसे सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया ने न्यायिक सक्रियता के तहत दिया। इस वाद में People's Union for Civil Liberties (PUCL) ने तर्क दिया कि यदि कोई मतदाता चुनाव में खड़े सभी उम्मीदवारों से संतुष्ट नहीं है, तो उसे उन्हें अस्वीकार करने का अधिकार मिलना चाहिए। पहले "49-O" के तहत असहमति दर्ज करने की व्यवस्था थी, लेकिन इसमें मतदाता की गोपनीयता सुरक्षित नहीं रहती थी।

न्यायालय ने यह माना कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता केवल किसी को चुनने तक सीमित नहीं है, बल्कि किसी को न चुनने का अधिकार भी इसमें शामिल है, जो अनुच्छेद 19(1)(a) के अंतर्गत आता है। इसी आधार पर अदालत ने इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) में "None of the Above (NOTA)" विकल्प शामिल करने का निर्देश दिया, जिससे मतदाता अपनी असहमति को गुप्त रूप से व्यक्त कर सके।

इस निर्णय के बाद भारत निर्वाचन आयोग ने सभी चुनावों में NOTA विकल्प लागू किया। इस फैसले ने चुनाव प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी और मतदाता-केंद्रित बनाया तथा राजनीतिक दलों पर बेहतर उम्मीदवार उतारने का नैतिक दबाव भी विकसित किया है।

इस प्रकार भारतीय लोकतंत्र के सुदृणीकरण व चुनावी पारदर्शिता लाने में न्यायपालिका की नवीन भूमिका "न्यायिक सक्रियता" का महत्वपूर्ण योगदान है। उपरोक्त सभी वादों ने नागरिकों के मौलिक अधिकारों को और अधिक विस्तार प्रदान करने के साथ-साथ राजनीतिक दलों के कर्तव्यों को भी पुर्नपरिभाषित किया है, वहीं उम्मीदवारों व राजनीतिक दलों की मनमानी पर रोक लगाई है। न्यायालय के इन निर्णयों ने यह सुनिश्चित किया है कि भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनमत ही सर्वोपरि है, जिसे किसी भी प्रकार भ्रमित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक नागरिक को अपने उम्मीदवार के संबंध में समुचित जानकारी का अधिकार है, जिससे वह विश्लेषण कर अपने मत का निर्धारण कर सके, वहीं कुछ कम ही सही लेकिन नोटा (NOTA) के रूप में कम से कम अपने विरोध को दर्ज करने का अवसर न्यायालय ने प्रदान किया है।राजनीति के अपराधीकरण पर भी रोक लगी है जिससे भविष्य में भारतीय लोकतंत्र सशक्त हो सकेगा।

Public Interest Foundation v. Union of India (2018),

यह मामला भारतीय राजनीति के अपराधीकरण को नियंत्रित करने तथा चुनावी पारदर्शिता को बढ़ाने से संबंधित एक महत्वपूर्ण निर्णय है। इस वाद में याचिकाकर्ताओं ने न्यायालय से मांग की, कि जिन व्यक्तियों के विरुद्ध गंभीर आपराधिक मामले लंबित हैं, उन्हें चुनाव लड़ने से रोका जाए, क्योंकि इससे लोकतंत्र की शुचिता और जनता का विश्वास प्रभावित होता है।

सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया ने माना कि राजनीति का अपराधीकरण लोकतंत्र के लिए गंभीर खतरा है, किंतु केवल आरोपों के आधार पर किसी व्यक्ति को चुनाव लड़ने से वंचित नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह "निर्दोषता की धारणा" के सिद्धांत के विरुद्ध होगा। न्यायालय ने कहा कि इस विषय में कानून बनाना विधायिका का कार्य है।

हालाँकि, न्यायालय ने चुनावी पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण निर्देश जारी किए। अदालत ने कहा कि आपराधिक मामलों वाले उम्मीदवार अपनी पृष्ठभूमि का पूरा विवरण शपथपत्र में दें। साथ ही राजनीतिक दलों

को ऐसे उम्मीदवारों की आपराधिक जानकारी अपनी वेबसाइट, सोशल मीडिया और समाचार पत्रों में प्रकाशित करनी होगी तथा यह बताना होगा कि उन्हें टिकट क्यों दिया गया।

इस निर्णय ने मतदाताओं के "जानने के अधिकार" को मजबूत किया और चुनाव प्रक्रिया में जवाबदेही तथा पारदर्शिता को बढ़ावा दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Union of India v. Association for Democratic Reforms (2002), (2002) 5 SCC 294, सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया।
2. People's Union for Civil Liberties v. Union of India (2003), (2003) 4 SCC 399, सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया।
3. Lily Thomas v. Union of India (2013), (2013) 7 SCC 653, सुप्रीम कोर्ट ऑफ India"
4. Subramanian Swamy v. Election Commission of India (2013), (2013) 10 SCC 500, सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया।
5. NOTA case (PUCL v. Union of India, 2013), (2013) 10 SCC 1, सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया।
6. Public Interest Foundation v. Union of India (2018), (2019) 3 SCC 224, सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया।